हिरोशिमा और नागासाकी की बमबारी हमें सिखाती है कि मानवता और परमाणु हथियार एक साथ नहीं रह सकते। -ईसाकु इकेदा

जापान के लोग छह अगस्त, 1945 के उस मनहूस दिन को कभी भूल नहीं सकते, जब परमाणु बम गिराया गया था। अब भी अस्पताल में प्रतिदिन उस हादसे से जीवित बचे औसतन 180 लोगों का उपचार किया जा रहा है, जिन्हें 'हिबाकुशा' के नाम से जाना जाता है। इन बम धमाकों ने लगभग दो लाख पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को मार डाला और अनगिनत लोगों को अपंग बना दिया। हिरोशिमा की 76,000 इमारतों में से 50,000 पूरी तरह से नष्ट हो गईं। नागासाकी में धमाके के डेढ़ मील के दायरे के लगभग सभी घर नष्ट हो गए।

हिरोशिमा में जिस जगह परमाणु बम गिरा, उसकी एआई तस्वीर।

परमाणु हमला और कुछ कहानियां

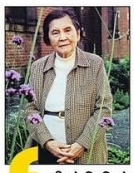

चीको किरिको

मैं 15 वर्ष की थी और उस दिन तंबाकू फैक्टरी की अपनी नौकरी में छुट्टी पर थी। सब कुछ जल गया था। लोग अपने जले हुए कपड़ों में इधर-उधर भटक रहे थे। उनकी त्वचा उतरकर नाखूनों से लटक रही थी, जैसे कि दस्ताने लटक रहे हों...

सेइचिरो मिसे

तब मैं 10 साल का था। नागासाकी में अपने घर पर ऑर्गन बजाते हुए बमवर्षकों की आवाज की नकल कर रहा था। मेरी शादी 1964 में हुई। दो वर्ष बाद अस्पताल से मुझे बच्चे की सूचना देने के लिए फोन आया। मैं परमाणु बम पीड़ित हूं, इसलिए घबरा गया। मैंने डॉक्टर से पूछा- क्या बच्चे के हाथों और पैरों में 10-10 अंगुलियां हैं? थोड़ी देर के लिए डॉक्टर परेशान दिखे, फिर उन्होंने मुस्कराते हुए कहा, आपका बेटा बिल्कुल स्वस्थ है।

हिरोशिमा

शहर के मध्य में स्थित रेडक्रॉस अस्पताल का प्रतीक्षालय हमेशा भरा रहता है। लगभग हर खाली सीट पर बुजुर्ग लोग बैठे अपना नाम पुकारे जाने का इंतजार करते हैं। इनमें से कई महिला एवं पुरुष मरीजों का कोई सामान्य चिकित्सकीय इतिहास नहीं है। वे 79 साल पहले हुए अमेरिकी परमाणु बम हमले के जीवित बचे हुए पीड़ित हैं। जापान के लोग छह अगस्त, 1945 के उस मनहूस दिन को कभी भूल नहीं सकते। अब भी अस्पताल में प्रतिदिन उस हादसे से जीवित बचे औसतन 180 लोगों का उपचार किया जा रहा है, जिन्हें 'हिबाकुशा' के नाम से जाना जाता है। ज्यादातर अमेरिकियों के लिए वह बम करीब चार वर्षों की अथक लड़ाई के बाद जीत की राह का प्रतिनिधित्व करता था, जो देश को पीढ़ियों तक महाशक्ति के रूप में स्थापित करने वाला था। हिरोशिमा में बम गिराने के तीन दिन बाद ही नागासाकी में भी बम गिराया गया था। धमाकों ने लगभग दो लाख पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को मार डाला और अनगिनत लोगों को अपंग बना दिया।

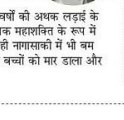

कैथलीन किंग्सबरी, डब्ल्यू.जे. हेनिगन और स्पेंसर कोहेन
द न्यूयॉर्क टाइम्स

हिरोशिमा की 76,000 इमारतों में से 50,000 पूरी तरह से नष्ट हो गईं। नागासाकी में धमाके के डेढ़ मील के दायरे के लगभग सभी घर नष्ट हो गए। दोनों शहरों में बुनियादी ढांचा पूरी तरह ध्वस्त हो गया। अमेरिकियों ने इस विनाश को जरूरी और सामाजिक कार्य बताया, जिसने युद्ध को खत्म कर दिया। हालांकि जापान में हिबाकुशा और उनकी संततियों ने परमाणु हमले की स्मृति को बचाए रखा है। कई लोग अपने काम से दुनिया को यह बताते हैं कि बमों के कारण होने वाले आघात, कलंक और बचे होने का अपराधबोध कैसा होता है, ताकि परमाणु हथियारों का फिर कभी इस्तेमाल न हो। औसतन 85 की आयु के हिबाकुशा हर महीने सैकड़ों की संख्या में मर रहे हैं, और दुनिया एक नए परमाणु युग में प्रवेश कर रही है। अमेरिका, चीन और रूस जैसे देश अपने परमाणु हथियार के भंडारों को आधुनिक बनाने के लिए खरबों डॉलर खर्च कर रहे हैं। ऐसे में दुनिया के लिए परमाणु हादसे से बचे पीड़ितों की कहानियां सुनना जरूरी है, जो परमाणु हथियारों की भयावहता के बारे में बता सकते हैं।

* * *

हिरोए कावाशिमो की मां हिरोशिमा में घर पर थीं... हिरोए का जन्म हादसे के आठ महीने बाद हुआ। उसकी मां हिरोशिमा में बम के विकिरण के संपर्क में आने के समय घटना स्थल से एक किमी दूर थी। कावाशिमो का वजन जन्म के समय मात्र 500 ग्राम था। वह उन कई बच्चों में से एक थी, जो गर्भ में रहते हुए बम के संपर्क में आए थे और उनका माइक्रोसेफेली, यानी छोटे सिर का निदान किया गया था।

* * *

कुनिहिको साकुमा अपनी मां के साथ घर पर थे... तब वह मात्र नौ महीने के थे। वह कहते हैं, 'आज भी ऐसे लोग हैं, जिन्हें उन भयावह अनुभवों के बारे में बात करने में मुश्किल होती है। बमबारी के 79 साल बाद आज भी उसके प्रभाव के लक्षण उभर रहे हैं।'

मुझे लगा कि यह सब अतीत की बातें हैं। लेकिन जब मैंने पीड़ितों से बात करना शुरू किया, तो मुझे एहसास हुआ कि उनका दुख अब भी ताजा है।

* * *

अब डॉक्टर बन चुके मासाओ तोमांगा बमबारी के समय नागासाकी में अपने घर की दूसरी मंजिल पर सो रहे थे... तब वह मात्र दो साल के थे। वह बताते हैं, बमबारी के समय एक महिला 17 साल की थी। उसने अपना पूरा जीवन व्हीलचेयर पर बिताया। जब वह 76 साल की थी, तो किन्हीं जांच के लिए मुझसे मिली। उसने मुझसे कहा, 'परमाणु बम मेरे अंदर जीवित है।' शायद उसे लग रहा था कि परमाणु बम उसके शरीर में प्रवेश कर गया है।

सेइजी टोकाटो हिरोशिमा में अपनी मां के साथ घर पर थे। वह बताते हैं...

मुझे जलने की गंध याद है। तब मैं मात्र चार साल का था। लेकिन कुछ साल बाद मेरे पैरों में फोड़े हो गए, जो लंबे समय तक ठीक नहीं हुए। इससे मुझे स्कूल जाने से नफरत हो गई। मेरी कांख और पैरों में सूजन हो गई, जिन्हें मुझे तीन बार कटवाना पड़ा।

शिगेकी मोरी हिरोशिमा में स्कूल जाते समय पुल पार कर रहे थे... उनकी पत्नी कायोको भी बम से बचे हुए लोगों में से हैं। तब वह आठ साल के थे और उनकी पत्नी तीन साल की थीं। वह कहते हैं, 'लोग अब भी इसे नहीं समझते हैं। परमाणु बम कोई सामान्य हथियार नहीं है। मैं एक ऐसे व्यक्ति के रूप में बोल रहा हूं, जो आज तक पीड़ित है: दुनिया को परमाणु युद्ध को फिर से होने से रोकने की जरूरत है। लेकिन समाचारों में मैं देखता हूं कि राजनेता ज्यादा हथियार, ज्यादा टैंक तैनात करने की बात करते हैं। वे ऐसा कैसे कर सकते हैं? मैं उस दिन की कामना करता हूं, जब वे इसे रोक दें।'

* * *

अब बचे हुए लोगों को बस यही चिंता है कि वे मरें और स्वर्ग में अपने परिवार से मिलें। मैंने कई बचे हुए लोगों को कहते सुना, 'मैं क्या करूं? इस धरती पर अब भी बहुत सारे परमाणु हथियार हैं, और फिर मैं अपनी बेटी से मिलूंगी, जिसे मैं बचा नहीं सकी। मुझसे पूछा जाएगा : मां, आपने परमाणु हथियारों को खत्म करने के लिए क्या किया? इसका कोई जवाब नहीं है, जो मैं उन्हें बता सकूं।'

* * *

शिगेकी मोरी के सीने की जेब में एक छोटी-सी गुलाबी पुस्तिका है- एक ऐसी कीमती चीज, जो पिछले कुछ वर्षों में उनकी आत्म-पहचान से और भी ज्यादा जुड़ गई है। परमाणु हमले से बचे लोगों की स्वास्थ्य पुस्तिका, जो उन्हें मुफ्त चिकित्सा जांच और उपचार की सुविधा देती है, जो 87 साल की उम्र में बहुत जरूरी है। बराक ओबामा 2016 में हिरोशिमा का दौरा करने वाले पहले अमेरिकी राष्ट्रपति थे। मोरी उन दो बचे लोगों में से एक थे, जिन्होंने ओबामा से संक्षिप्त बातचीत की, जिसके बाद दोनों भावुक होकर गले मिले। मोरी अपने लिविंग रूम की दीवार पर गर्व से उस पल की तस्वीर को लगाए हुए हैं। कई जापानियों को उम्मीद थी कि ओबामा आधिकारिक रूप से बमबारी के लिए माफी मांगेंगे, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। हालांकि, ओबामा उस दिन के विनाश को स्वीकार करने से नहीं कतराए। तब ओबामा ने कहा था, 'केवल शब्दों से ऐसी पीड़ा को व्यक्त नहीं किया जा सकता है, हम सभी की साझा जिम्मेदारी है कि हम सीधे इतिहास की आंखों में देखकर पूछें कि हमें ऐसी पीड़ा को फिर से रोकने के लिए क्या अलग करना चाहिए। किसी दिन हिबाकुशा की आवाजें गवाही देने के लिए हमारे साथ नहीं रहेंगी। लेकिन छह अगस्त, 1945 की सुबह की याद कभी फीकी नहीं पड़नी चाहिए। वह याद हमें आत्मसंतुष्टि से लड़ने के लिए प्रेरित करती है। यह हमारी नैतिक कल्पना को बढ़ावा देती है। यह हमें बदलाव की अनुमति देती है।'

©The New York Times 2024

जानना जरूरी है
संस्कृति के पन्नों से

आशुतोष गर्ग
लेखक एवं अनुवादक

यमुना में नाव चला रही सत्यवती पर महर्षि पराशर मोहित हो गए और कहा कि वरदान मांग लो। सत्यवती ने कहा, 'मेरे शरीर से आने वाली मछली की गंध दूर हो जाए और उसके स्थान पर सदा उत्तम सुगंध आए।'

सत्यवती कैसे बनीं मत्स्यगंधा से योजनगंधा

चेदि नरेश वसु की मैत्री देवराज इंद्र से थी। वसु इंद्र द्वारा दिए स्फटिक निर्मित विमान से आकाश में भ्रमण करता था। सदा ऊपर ही ऊपर चलने के कारण वह 'उपरिचर वसु' के नाम से विख्यात हुआ। उपरिचर की राजधानी के निकट शुक्तिमती नदी बहती थी। एक दिन कोलाहल नामक पर्वत ने नदी का मार्ग रोक लिया। वसु ने पैर के प्रहार से पर्वत में दरार डाल दी और नदी का मार्ग खोल दिया। पर्वत और नदी के योग से जुड़वां संतानें पैदा हुईं, जिन्हें नदी ने राजा वसु को भेंट कर दिया। वसु ने पुत्र को अपना सेनापति बनाया और गिरिका नामक कन्या से विवाह कर लिया।

धूप आवे दो

एक दिन राजा वसु आखेट पर गया था। वहां उसे सहसा गिरिका की याद आई और वह कामासक्त हो गया। फिर वसु का वीर्य स्खलित हो गया। वीर्य और गिरिका का ऋतुकाल व्यर्थ न जाए, यह सोचकर राजा वसु ने वीर्य को एक पत्ते पर उठाया और उसे पुत्रोत्पत्ति मंत्र से अभिमंत्रित करके एक बाज को सौंपते हुए कहा कि वह वीर्य को उसकी पत्नी गिरिका तक पहुंचा दे।

मार्ग में एक अन्य बाज ने वीर्य ले जा रहे बाज पर मांस की संभावना से आक्रमण कर दिया। इसी छीना-झपटी में वसु का वीर्य नदी में गिर गया। नदी में अद्रिका नाम की एक अप्सरा ब्रह्मा के शाप से मछली बनकर अपना समय काट रही थी। वसु का वीर्य अद्रिका ने ग्रहण कर लिया और वह गर्भवती हो गई। संयोग से दसवें माह में गर्भवती अद्रिका एक मछुआरे के जाल में फंस गई। मछुआरे ने जैसे ही मछली का पेट चीरा, तो भीतर से दो बच्चे-एक कन्या और एक बालक निकला। इसी के साथ अप्सरा अद्रिका, ब्रह्मा के शाप से मुक्त हो गई। फिर वह मछुआरा, मछली से उत्पन्न दोनों बच्चों को राजा वसु के पास लेकर गया। राजा उपरिचर ने बालक को अपने पास रख लिया, जो बाद में मत्स्य नाम का धर्मात्मा राजा हुआ। और वसु ने कन्या, मछुआरे को ही सौंप दी। वह कन्या रूप, सत्य एवं अन्य समस्त गुणों से युक्त थी, इसलिए उसका नाम 'सत्यवती' रखा गया। चूंकि सत्यवती का जन्म मछली से हुआ था, तो उसके शरीर से मछली की गंध आती थी। इसलिए उसका एक नाम मत्स्यगंधा पड़ गया। वह पिता की मदद करने के लिए यमुना में नाव चलाती थी।

एक दिन महर्षि पराशर की दृष्टि सत्यवती पर पड़ी। उसका सौंदर्य देख उन्होंने उसके साथ समागम की इच्छा प्रकट की। सत्यवती ने कहा, 'नदी के दोनों तटों पर बहुत-से ऋषि हमें देख रहे हैं। ऐसी दशा में समागम कैसे हो सकता है?'

यह सुनकर पराशर ने योगबल से चारों ओर कुहरे की सृष्टि कर दी, जिससे पूरा प्रदेश अन्य लोगों की दृष्टि से ओझल हो गया। तब सत्यवती ने कहा, 'प्रभु! मैं अपने पिता के अधीन रहने वाली कुंवारी कन्या हूं। आपके साथ समागम करने से मेरा कौमार्य भंग हो जाएगा और फिर मैं अपने घर नहीं जा सकूंगी। इस कलंक के साथ मेरे लिए जीवित रहना भी कठिन हो जाएगा। इसलिए आप इन बातों पर विचार करके जो उचित जान पड़े, वह कीजिए।' सत्यवती की बात सुनकर पराशर मुस्कराते हुए बोले, 'मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि मेरे साथ समागम करने के उपरांत भी तुम कन्या ही रहोगी। मेरे इस कार्य को सिद्ध करने के बदले तुम जो चाहो, मुझसे वर मांग सकती हो।'

महर्षि पराशर के ऐसा कहने पर सत्यवती ने उनसे वरदान मांगा कि उसके शरीर से आने वाली मछली की गंध दूर हो जाए और उसके स्थान पर सदा उत्तम सुगंध आए। पराशर ने सत्यवती को मनवांछित वर दे दिया। पाराशर से मिले वरदान के फलस्वरूप सत्यवती के तन से सुगंध आने लगी, जो एक योजन दूर तक महसूस होती थी। इस तरह मत्स्यगंधा सत्यवती, पराशर के वरदान से 'योजनगंधा' कहलाने लगी। तदनंतर, सत्यवती ने पराशर के साथ समागम किया और एक पुत्र को जन्म दिया। कृष्ण वर्ण के उस बालक का जन्म द्वीप पर हुआ था, इसलिए वह कृष्ण द्वैपायन कहलाया, जिसे संसार महर्षि वेदव्यास के नाम से जानता है।

खुशी वाली कोशिका को पहचानें

विद्वांस कामान्यः
सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहंकारः
स शान्तिमधिगच्छति।।

अर्थात जो पुरुष संपूर्ण कामनाओं को त्याग कर ममतारहित, अहंकाररहित और स्पृहारहित हुआ विचरता है, वही शांति को प्राप्त होता है।

– भीष्म पर्व, गीता 2/2/71
(अर्जुन के प्रति साक्षात भगवान श्रीकृष्ण का गीतोपदेश)

प्रस्तुति : **विवेक चौरसिया**

जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण भी आते हैं, जब खुशी की सख्त जरूरत होने के बावजूद हम अक्सर उन अनुभवों से बचते हैं, जिनसे हमें ज्यादा आनंद मिल सकता है। मसलन, हम जन्मदिन पार्टी छोड़ देते हैं, या लंच कैंसिल कर देते हैं। और फिर हम पहले से ज्यादा बुरा महसूस करते हैं। तो उदासी, तनाव, थकावट या अकेलेपन से बाहर निकलने के लिए हम क्या कर सकते हैं?

ऐसे में खुद को मजबूत बनाना एक सफल रणनीति है, जिसे मनोवैज्ञानिक प्रतिफल संवेदनशीलता (रिवॉर्ड सेंसिटिविटी) कहते हैं। खुशी तलाशने की इच्छा एक ताकत है, जिसे हम विकसित कर सकते हैं। हमें बस अपनी खुशी वाली कोशिका को मजबूत बनाना होगा। अनुभवों का आनंद लेने की हमारी क्षमता भी इस पर ही निर्भर है। लगभग हर इन्सान अपनी सकारात्मक भावनाओं को समझने व आनंद लेने के लिए खुद को प्रशिक्षित कर सकता है। यह अवसाद और चिंताग्रस्त लोगों के लिए भी सच है, जो आनंद के लिए जूझते हैं। जब मानसिक स्वास्थ्य उपचार की बात आती है, तो चिकित्सक अपने रोगियों के नकारात्मक लक्षणों को कम करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। लेकिन ज्यादातर लोगों को दर्द कम करने के साथ अपनी खुशी बढ़ाने की भी जरूरत है। रिवॉर्ड सेंसिटिविटी बढ़ाने के लिए आप व्यायाम आजमा सकते हैं। जब तक यह मददगार हो, इसे रोजाना करें, लेकिन कम से कम एक हफ्ते तक इसे करने का प्रयास करें। प्रतिदिन ऐसी गतिविधि की शुरुआत करें, जो आपको खुश करे। इससे सकारात्मक अनुभवों को टालने की संभावना कम हो जाएगी। यह पसंदीदा स्नैक खाने, उपन्यास के कुछ पन्ने पढ़ने या किसी मित्र से आमने-सामने बैठकर या वीडियो पर बात करने जैसा छोटा काम भी हो सकता है। मनोवैज्ञानिक सकारात्मक भावनाओं को पहचानने और उनमें डूबने की प्रक्रिया को 'स्वाद लेना' कहते हैं। डॉ. लाफ्रेनियर के अनुसार, आनंद लेने से किसी घटना के नकारात्मक पहलुओं से मुकाबला करने में भी मदद मिलती है।

जेनी टैंट्ज़
द न्यूयॉर्क टाइम्स

किताब के कुछ पन्ने पढ़ना, दोस्त से बात करना या कोई खेल खेलना, यानी हर रोज कुछ देर वह काम करें, जो आपको खुशी देता हो।

सकारात्मक भावनाओं को बढ़ाने के लिए अपनी खुशी की शब्दावली का विस्तार करें। सामाजिक संवेदनशीलता पर शोध करने वाले कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में मनोचिकित्सा के एसोसिएट प्रोफेसर चार्ली टेलर कहते हैं, अपनी भावनाओं को व्यक्त करना लुभावना हो सकता है। लेकिन आपको सबसे ज्यादा खुशी किस बात से मिली, यह बताने से आप बेहतर महसूस कर सकते हैं, उस खुशी को इस्सान व्यक्ति तक फैला सकते हैं और रिश्ते को भी मजबूत बना सकते हैं। हमेशा खुद को खुश रखें।

©The New York Times 2024

अध्ययन कक्ष

ऑल दैट ग्लिटर्स
ए स्टोरी ऑफ फ्रेंडशिप, फ्रॉड एंड फाइन आर्ट

लेखक : ऑरलैंडो व्हिटफील्ड

प्रकाशक : ग्रैफाइट बुक्स
मूल्य : 1,867 रुपये
हार्डकवर

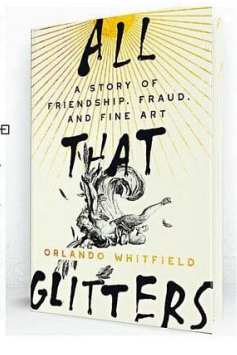

दोस्ती, धोखा और फाइन आर्ट

ऑरलैंडो व्हिटफील्ड के संस्मरण *'ऑल दैट ग्लिटर्स'* कला प्रदर्शनियों की व्यवस्थित दिखने वाली दुनिया के समानांतर चलने वाली नारकीय दुनिया के बारे में है, जहां ग्लैमर, पैसा और धोखेबाजी सबकुछ है, बस कला नहीं है।

मूर्ख बनाया जाना किसी को भी अच्छा नहीं लगता, लेकिन हममें से बहुत से लोग धोखा देने वाले उन कलाकारों को पसंद करते हैं, जो धोखे और चोटालें से अपार धन-संपत्ति अर्जित करने का रास्ता बनाते हैं। एक पूर्व हाई-फाई डीलर ऑरलैंडो व्हिटफील्ड द्वारा लिखे गए संस्मरण *'ऑल दैट ग्लिटर्स'* में बड़े पैमाने पर कला के अनियमित बाजार का चित्रण किया गया है, जहां अकूत पैसा और धोखा साथ-साथ चलता है।

अक्तूबर 2019 में, जब कला बाजार के एक युवा लीडर इनिगो फिलब्रिक पर निवेशकों, संग्राहकों और कर्जदाताओं से लाखों डॉलर की धोखाधड़ी करने का आरोप लगा, तो वह मियामी से भागकर दक्षिण प्रशांत द्वीप वानुअतु चला गया। वहां से, उसने कला विद्यालय के अपने पुराने सहपाठी ऑरलैंडो व्हिटफील्ड को संदेश और दस्तावेज भेजने शुरू किए, जो कुछ समय के लिए उसका व्यापारिक साझेदार भी था। व्हिटफील्ड ने अपनी अजीब और कष्टदायक दोस्ती के मनोरंजक संस्मरण *'ऑल दैट ग्लिटर्स'* में लिखे हैं। वह लिखते हैं, 'मुझे नहीं पता था कि मुझे उसके खिलाफ लगे आरोपों में फंसाया जा सकता है।' एक नाकामयाब कला डीलर व्हिटफील्ड यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें यह महसूस हुआ कि एक भगोड़ा उन्हें रोमांचक टेलीग्राम संदेशों के जरिये मानो किसी गुप्त समाज में बुला रहा हो।' व्हिटफील्ड जब पहली बार 2007 में फिलब्रिक से मिले, तब वह कला के क्षेत्र में अपनी पसंद और नापसंद को लेकर काफी असमंजस में रहा करते थे। युवावस्था की असुरक्षाओं और उलझनों को याद करते हुए वह लिखते हैं, 'मुझे नहीं पता था कि मुझे क्या पसंद है।'

व्हिटफील्ड ने अपनी इस पुस्तक में दुनिया भर में कलाकृति और पैसे को स्थानांतरित करने के फिलब्रिक के कारनामों का वर्णन किया है। अपनी डीलरशिप भंग करने के बाद भी फिलब्रिक ने व्हिटफील्ड को लंदन गैलरी व्हाइट क्यूब के संस्थापक जे जोपलिंग द्वारा शुरू की गई एक सेकेंडरी आर्ट्स सेल कंपनी में काम पर रखा। व्हिटफील्ड ने फिलब्रिक द्वारा सौंपे गए काम के बारे में कहा, 'मैं पूरी तरह से अयोग्य था,' जिसमें कैटलॉग और प्रदर्शनियों का प्रबंधन करना शामिल था। लेकिन व्हिटफील्ड बेहद तनावपूर्ण स्थितियों से भी अपने तरीके से निपट सकते थे। पूरी पुस्तक में वह अपनी 'अनिच्छा और बेचैनी' को दर्शाते हैं। हालांकि पुस्तक यह भी बताती है कि जल्द ही व्हिटफील्ड खुद पैसों के लालच में फिलब्रिक और दूसरे लोगों से झूठ बोलते हैं। फिर भी वह स्वीकार करते हैं कि वह कला बाजार में प्रचलित धोखेबाजीपूर्ण कायदों को बदीलत नहीं कर सके। वर्ष 2018 में नर्वस ब्रेकडाउन के बाद उन्हें एक मनोरोगी वार्ड में भर्ती कराया गया था। वहां उनकी मुलाकात एक भूरे बालों वाले मरीज से हुई, जो एक 'बहुत प्रसिद्ध कलाकार' था। उस कलाकार ने व्हिटफील्ड को कला-दुनिया की परेशानियों को सुनकर कहा, 'तुम अब भी इससे बाहर निकल सकते हो, निकल जाओ।'

ऑल दैट ग्लिटर्स कला बाजार की अनियमितताओं की कहानी है कि कैसे अवसरों और प्रोत्साहनों के प्रति हमेशा सजग रहने वाले चतुर फिलब्रिक ने सिस्टम की कमजोरियों को पहचाना और उसी के अनुसार उन पर दबाव बनाया। पुस्तक व्हिटफील्ड के रूपांतरण के बारे में भी है, जिन्हें समझ आ गया कि किसी कलाकृति के सामने खड़ा होना और उसे बस एकटक निहारते रहने का क्या अर्थ होता है।

अभियान

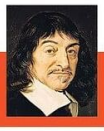

एक अच्छा दिमाग होना काफी नहीं है। महत्वपूर्ण है, बुद्धि का सही से उपयोग करना।
- रेने डेसकार्टेस

amarujala.com
अमर उजाला

गोल चबूतरा

Hindi@mithelesh

■ मिथिलेश बारिया

वो चाहता तो मुझे मार भी सकता था,
पर यूं किया जालिम ने,
मुझे जिंदा छोड़ दिया...
.....
कप के तले में बची वो जरा-सी चाय,
होंठों की उस पहली-सी वफा को तरसती है,
सब तजुर्बे नहीं थे, कुछ गलतियां भी थीं...

पहली बार पार किया इंग्लिश चैनल

आज के ही दिन सन 1875 में मर्चेंट नेवी के 27 वर्षीय कैप्टन मैथ्यू वेब बिना किसी सहायता के इंग्लिश चैनल को तैरकर पार करने वाले पहले व्यक्ति बने थे। उन्होंने इंग्लिश चैनल की 21 मील की यह यात्रा 21 घंटे और 45 मिनट में पूरी की। हालांकि ज्वार की वजह से उठने वाली तेज लहरों के कारण उन्हें 21 की जगह 39 मील की तैराकी करनी पड़ी। मैथ्यू वेब ने 12 साल की उम्र में आयरनब्रिज के नीचे सेवर्न नदी में तैरना सीखा और व्यापारिक प्रशिक्षण जहाज 'कॉनवे' में शामिल हो गए। इस दौरान उन्होंने कई मौकों पर अपनी तैराकी का जलवा दिखाया। अखबार में किसी तैराक द्वारा इंग्लिश चैनल को पार करने के असफल प्रयास के बारे में पढ़कर वेब ने इसे तैरकर पार करने का फैसला किया। अगस्त 1875 में इंग्लिश चैनल को तैरकर पार करने का उनका पहला प्रयास विफल रहा, लेकिन 24 अगस्त, 1875 को वेब ने एक बार फिर से इंग्लिश चैनल के ठंडे पानी में गोता लगाया। इस दौरान उन्हें जेलीफिश और समुद्री शैवालों का भी सामना करना पड़ा। फ्रांसीसी तट पर पहुंचने से पहले सात मील दूर समुद्र में ज्वार के कारण उन्हें 18 मील अधिक तैरना पड़ा, लेकिन सुबह 10 बजे के बाद वह फ्रांसीसी तट पर पहुंच गए। इस तरह उन्होंने अपनी यात्रा पूरी की।

झरोखा
25 अगस्त

■ पूजा पोद्दार, दरभंगा

ऊंच-नीच का भेदभाव, सामाजिक कटुता और महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार की समस्याओं के खात्मे के लिए सख्त कानूनों के साथ-साथ हमें भी जागरूक होना होगा, क्योंकि हम लोगों से ही तो समाज बनता है।

हम सबसे मिलकर तो बनता है समाज

समाज में चेतना जगाने की जरूरत

कुछ दिन पहले हमने स्वाधीनता का 78वां समारोह मनाया। नई पीढ़ी और जिनका जन्म साठ-सत्तर के दशक के बाद हुआ है, उन्हें लगता होगा कि स्वाधीनता सेनानियों ने सिर्फ आजादी की लड़ाई लड़ी। लेकिन समाज का एक वर्ग इस बात को लेकर मंथन कर रहा था कि आखिर हमारे समाज और धर्म में कौन-सी ऐसी बुराइयां हैं, जिनके कारण हमें बुराई में बुराई नजर नहीं आती है। बाकायदा इसके लिए उन्होंने धर्म एवं समाज सुधार आंदोलन चलाया।

चिट्ठी 1

देश आजाद हुआ। हम अपनी व्यवस्था संचालन में उलझ गए। फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा। हमें तो लगा कि अब हमारे पास अपनी संसद, विधानसभाएं हैं। हम अपनी हर बुराई का समाधान कानून बनाकर कर लेंगे। मगर हमें शायद अब भी आभास नहीं है कि कानून की अपनी सीमाएं हैं। वे तभी सफल हो सकते हैं, जब उनके प्रति आमजन में चेतना आएगी। राजा राममोहन राय सती प्रथा को लेकर महिलाओं की दुर्दशा के बारे में चैतन्य हुए और समाज में चेतना जगाने का प्रयास किया, यातनाएं सहीं। तब कानून बनाने की पहल हुई। नतीजतन, आज सती प्रथा का खात्मा हो गया।

आज 21वीं सदी का समाज सबसे बड़ी चुनौती का सामना कर रहा है। इसमें पहले स्थान पर है- महिला और पर्यावरण की सुरक्षा। लेकिन हमारे भीतर यह भाव आ ही नहीं पा रहा है। इसलिए जरूरत उस चेतना की है, जिसको कभी धर्म और समाज सुधार आंदोलन के जरिये 19वीं सदी में जगाया गया था, लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि लाभ-हानि के अतिरेक में हम तन-मन-धन से भ्रष्ट हो चुके हैं। इस कारण चारों तरफ एक अजीब किस्म की बेचैनी है। बेहतर होगा, हम हर समस्या का समाधान राजनीति और कानून में न ढूंढें। सबसे अहम बात तो यह है कि हम अपने बच्चों से अक्सर कहते हैं कि जानवरों से दूर रहो। ये काट लेंगे। कभी हम यह क्यों नहीं सिखाते कि जानवरों पर दया करो। उनको बेरहमी से मत मारो। अक्सर देखा जाता है कि गली के कुत्तों और बिल्लियों को डंडे से मारा जाता है, ताकि वे गली में न आएं। कभी सोचिए, क्या ऐसा करना सही है? हम खुद जानवरों के प्रति पहले संवेदशीलता और दयाभाव रखें, ताकि हमारे बच्चे भी इस बात को समझ सकें। भूखे जानवरों को भोजन दें। तेज गति से वाहन न चलाएं। वाहन स्टार्ट करने से पहले अपने वाहन के नीचे जरूर चेक करें। अगर किसी कुत्ते, बिल्ली या अन्य जानवर से खतरा है तो संबंधित नजदीकी संस्था या विभाग को तुरंत सूचना दें। पशुओं पर क्रूरता करने वालों पर सख्त कार्रवाई होनी चाहिए।

■ मुकेश कुमार मनन, पटना

पशुओं के प्रति दयाभाव

हम इतने स्वार्थी और संवेदनशील हो गए हैं कि कुत्ते, बिल्ली, गाय जैसे भूखे जानवरों और पक्षियों को नजरंदाज करके आगे बढ़ जाते हैं। उनकी भूख और प्यास हमें शायद नजर नहीं आती है। दूसरी पीड़ादायक बात तो यह है कि हम अपने वाहन को इतनी रफ्तार से दौड़ाते हैं कि इन बेजुबानों को अपनी जान तक गंवानी पड़ती है। अक्सर ये बेजुबान बड़े वाहनों के नीचे धूप या बारिश से बचने के लिए लेट जाते हैं और हम बिना देखे, बिना चेक किए ही वाहन उनके ऊपर से निकाल देते हैं, जिससे ये जीवनभर के लिए अपाहिज हो जाते हैं या फिर उनकी जान चली जाती है।

चिट्ठी 2

■ मुंजस्सिम रहमान, ऊधम सिंह नगर

गांव, गांव ही रहे तो अच्छा

भारत गांवों का देश है, पर गांवों की आत्मा में रचा-बसा देश अब धीरे-धीरे बदल रहा है। शहरों की चकाचौंध में गांव भी खोने लगे हैं। चौंकिए मत, इस चकाचौंध को रोकने के उपाय भी सरकार कर रही है, ताकि गांव अपनी पहचान, अपनी संस्कृति और इतिहास से अलग न हो जाएं।

चिट्ठी 3

संस्कृति मंत्रालय देश के हर गांव की कल्चरल मैपिंग करवा रहा है, जिससे उनकी पहचान जिंदा रह सके। संस्कृति मंत्रालय 'मेरा गांव मेरी धरोहर' कार्यक्रम के तहत गांव की उपलब्ध सुविधाओं, बुनियादी जरूरतों, स्थानीय कलाकारों, स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों, सेना के बलिदानियों, खेल प्रतिभाओं आदि का ब्योरा तैयार कर रहा है। देश के साढ़े छह लाख से अधिक गांवों में से 4.10 लाख गांवों की जानकारी संग्रहित की जा चुकी है। मैपिंग का काम पूरा होने के बाद हर गांव को एक यूनिक आईडी दी जाएगी। इससे दुनिया में कहीं भी बैठकर इन गांवों को खोजा जा सकेगा। एक बड़ी पहल ऐसे गांव को पर्यटन से जोड़ने की होगी, जिससे वे पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र बन सकेंगे।

भारत में आज भी सैकड़ों गांव ऐसे हैं, जो विभिन्न क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं, लेकिन वे लोक संपर्क से दूर हैं। संस्कृति मंत्रालय का यह प्रयास गांव के शहरीकरण को तो रोकेगा ही, उनकी संस्कृति, कला और विशिष्ट वैभव को भी संरक्षित कर सकेगा। सरकार को जल्द ही इस योजना पर अमल करना चाहिए, ताकि गांवों की संस्कृति और उनकी पहचान कायम रह सके।

■ अमृतलाल मारू 'रवि', इंदौर

इनकी चिट्ठियां भी सराहनीय रहीं

जालंधर से सत्तेश कुमार चौहान, बरेली से दिलीप कुमार गुप्ता, मेरठ से अहमद खान, दिल्ली से विजय किशोर तिवारी, आजमगढ़ से अवनीश कुमार गुप्ता, अलीगढ़ से अनुपमा अग्रवाल, फिरोजाबाद से शैलेन्द्र कुमार चतुर्वेदी, फिरोजाबाद से वितित रावत, वैनीताल से डॉ. प्रमोद अग्रवाल जोल्डी, मिर्जापुर से सलिल पांडेय, लखनऊ से रतन कुमार श्रीवास्तव 'रतन', दिल्ली से राखी सरोजा

हमें लिखें
abhiyan@amarujala.com

कुछ अलग

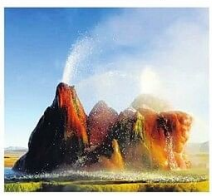

गरम पानी का रंग-बिरंगा फव्वारा

फ्लाई रैंच गीजर का निर्माण एक अनोखी और आकस्मिक घटना है, जो 1916 में एक कुएं की ड्रिलिंग ऑपरेशन के दौरान सामने आई थी।

फ्लाई रैंच गीजर अमेरिका के उत्तर-पश्चिमी नेवादा के सुदूर ब्लैक रॉक रेगिस्तान में स्थित है। यह गेरलाच शहर से लगभग 20 मील उत्तर में है। ब्लैक रॉक रेगिस्तान अपनी शुष्क और कठोर जलवायु के लिए जाना जाता है।

दरअसल, 1916 में भू-तापीय ऊर्जा के स्रोतों का पता लगाने के लिए एक कुआं खोदा जा रहा था, लेकिन उस कुएं को ठीक से ढका नहीं गया था। इस वजह से कुएं की सतह के नीचे का गरम पानी और खनिज ऊपर उठने लगे और कुएं से बाहर निकलने लगे। लगातार गरम पानी निकलने के कारण वहां एक छोटा गरम झरना बन गया। समय के साथ गरम पानी और खनिजों के निरंतर प्रवाह से कुएं के चारों ओर चूना-पत्थर की परतें बन गईं। समय के साथ यह चूना-पत्थर का टीला शंकु के आकार की संरचना में विकसित हो गया। फ्लाई रैंच गीजर अपने लाल, हरे और सफेद रंगों के लिए जाना जाता है, जो गर्म सोतों वाले जलाशय से लगातार बहने वाले खनिजयुक्त गर्म पानी में पनपने वाले थर्मोफिलिक शैवाल के कारण होता है।

फ्लाई रैंच गीजर सिर्फ देखने में ही खूबसूरत नहीं है, इसका वैज्ञानिक महत्व भी है। फ्लाई गीजर से जुड़ी भू-तापीय प्रक्रियाएं, खनिज जमाव और माइक्रोबियल जीवन, वैज्ञानिक अध्ययन का विषय रहे हैं, जो अद्वितीय भू-वैज्ञानिक और पारिस्थितिकी प्रक्रियाओं को नजदीक से समझने की दृष्टि प्रदान करते हैं। फ्लाई गीजर जिस जमीन पर स्थित है, उसे संरक्षित करने और लोगों की आवाजाही से दूर रखने के निर्देश हैं। फ्लाई गीजर की सुंदरता को बचाए रखने, उसके भूगर्भीय महत्व और संरक्षण के प्रयासों की वजह से इस जगह पर सिर्फ निर्देशित पर्यटन ही उपलब्ध है।

■ प्रतिमा मिश्रा, इलाहाबाद

बास्केटबॉल टीम में बराक ओबामा

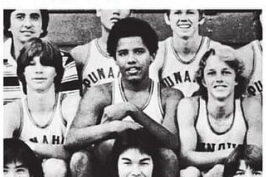

यह तस्वीर पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के स्कूली दिनों की है। इसमें वह अपनी हाईस्कूल बास्केटबॉल टीम के साथ बैठे नजर आ रहे हैं। ■ जीद से मोहिनी

ग्रामोफोन

पहले शम्मी कपूर नहीं चाहते थे...

मशहूर निर्देशक विजय आनंद, शम्मी कपूर और आशा पारेख को लेकर एक फिल्म बना रहे थे- 'तीसरी मंजिल'। शम्मी कपूर अपनी छवि के अनुरूप संगीत के लिए शंकर-जयकिशन के अभ्यस्त हो चुके थे और 'तीसरी मंजिल' के लिए भी शंकर-जयकिशन को ही चाहते थे, मगर जब उन्होंने पंचम की धुनें सुनीं तो इतने कायल हो गए कि इस फिल्म में उनकी उमंग-उत्साह भरी छवि इस संगीत के साथ और भी झूमने पर मजबूर करने वाले के रूप में उभरी। 1966 में रिलीज हुई 'तीसरी मंजिल' में पंचम ड्रम, सैक्सोफोन, इलेक्ट्रिक ऑर्गन और गिटार का चामत्कारिक प्रयोग कर जैज संगीत का प्रभावी रूप लेकर आए। फिल्म के गीत 'आ जा आ जा, मैं हूं प्यार तेरा' की शैली इतनी मिल्स और मस्त करने वाली थी कि मोहम्मद रफी के साथ रिकॉर्डिंग के बाद आशा भोसले ने जब इसे घर पर गुनगुनाकर लता मंगेशकर को सुनाया तो वह भी वाह-वाह कर उठीं। इस गीत को मशहूर शायर मजरूह सुल्तानपुरी ने लिखा था और परदे पर इसे शम्मी कपूर और आशा पारेख ने गाया था।

■ सारिका शर्मा, दिल्ली

अगर हमें 'विश्व मित्र' बनना है तो...

अगर भारत दुनिया के सभी देशों का दोस्त बनकर रहना चाहता है तो उसे अपने पड़ोसियों के साथ व्यवहार में बदलाव लाना होगा।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के पहले और दूसरे कार्यकाल में सरकार के समर्थकों ने यह दावा किया कि भारत विश्व गुरु बनने की ओर बढ़ रहा है। बार-बार कहा गया कि हमारी सभ्यतागत गहराई, समृद्ध दार्शनिक परंपराएं और विशिष्ट आध्यात्मिक प्रभावों ने हमें संस्कृति के मामले में हमेशा अग्रणी रखा है। अब भारत आर्थिक और तकनीकी तौर पर सफल है। वैश्विक नेतृत्व भी इससे पूरी तरह आश्वस्त है। इस दावे को व्यक्ति केंद्रित रखा गया और कहा गया कि सिर्फ भारत ही नहीं, बल्कि नरेंद्र मोदी विश्व का नेतृत्व कर रहे हैं। इसलिए विदेश में जी-20 बैठकों की मॉर्फर्ड तस्वीरें सामने आईं, जिनमें हमारे प्रधानमंत्री को एक भव्य इमारत की सीढ़ियों से उतरते हुए देखा गया, जबकि अमेरिकी राष्ट्रपति, फ्रांसीसी राष्ट्रपति, ब्रिटिश प्रधानमंत्री आदि चुपचाप उनके पीछे चल रहे थे। इस तरह के प्रचार का कुछ हद तक असर भी हुआ। वर्ष 2023 में भारत द्वारा जी-20 की बारी-बारी से अध्यक्षता संभालने के बाद मेरे एक मित्र ने दिल्ली मेट्रो में किसी को यह कहते हुए सुना, "आपको पता है कि मोदी जी केवल हमारे देश के नहीं, बीस देशों के प्रधानमंत्री हैं!"

उसी समय एक बदलाव पार्टी के प्रचार की दुनिया में उभरकर सामने आया। कहा जाने लगा कि भारत विश्व मित्र है। यह मोदी शासन की महत्वाकांक्षाओं का स्पष्ट रूप से अवमूल्यन था। भारत अभी दुनिया को सिखाने की स्थिति में नहीं था, फिर भी वह दुनिया के हर देश से दोस्ती करने की अनोखी स्थिति में था। अपनी बड़ाई खुद करने की यह स्थिति भारतीय राजनीति में क्यों आई, इसके बारे में अटकलें ही लगाई जा सकती हैं। क्या ऐसा इसलिए हुआ कि दिल्ली मेट्रो में बैठे भक्तों के विपरीत शासन के प्रचारकों को पता था कि भारत की जी-20 अध्यक्षता बहुत अस्थायी है और बहुत जल्द समाप्त हो जाएगी? या हमारी अर्थव्यवस्था लोगों की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतरी? या फिर हमारी सीमा पर चीनी घुसपैठ और प्रधानमंत्री की उसके बारे में बोलने की अनिच्छा ने वैश्विक नेतृत्व के हमारे दावों को खोखला बना दिया? तथ्य यह है कि विमर्श में एक स्पष्ट बदलाव आया था। सत्ता पक्ष के शांत और यथार्थवादी समूहों में 'विश्व मित्र' शब्द का उपयोग पहले से कहीं अधिक बार किया जा रहा था।

हालांकि बांग्लादेश संकट के मद्देनजर इस हल्के, कम गंभीर अहंकार को भी त्यागने का समय आ गया है। ऐसा लगता है कि हमारे निकटतम पड़ोसी देशों के नागरिक भारत को एक विश्वसनीय या भरोसेमंद मित्र नहीं मानते हैं। कई बांग्लादेशी भारतीय इरादों को लेकर आशंकित हैं, जिसका मुख्य कारण मोदी शासन द्वारा शेख हसीना के निरंकुश तरीकों का उत्साहपूर्ण समर्थन है। पिछली जनवरी में जब शेख हसीना ने दोबारा हुए चुनाव में धांधली से जीत हासिल की थी, तब भी भारतीय चुनाव आयोग ने बांग्लादेशी चुनाव आयोग की तारीफ की थी। श्रीलंका और नेपाल में भी यह भावना साफ तौर पर मौजूद है कि भारत का व्यवहार पड़ोसी

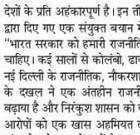

रामचंद्र गुहा
जाने-माने इतिहासकार

देशों के प्रति अहंकारपूर्ण है। इन तीनों देशों के नागरिकों द्वारा हिए गए एक संयुक्त बयान में यह कहा गया कि "भारत सरकार को हमारी राजनीति में दखल नहीं देना चाहिए। कई सालों से कोलंबो, ढाका और काठमांडू में नई दिल्ली के राजनीतिक, नौकरशाही और खुफिया तंत्र के दखल ने एक अंतहीन राजनीतिक अस्थिरता को बढ़ावा है और निरंकुश शासन को बढ़ावा दिया है।" इन आरोपों को एक खास अहमियत दी जाती है। इसलिए बांग्लादेश के इन लेखकों के बयान कि पिछले दशक में शेख हसीना के निरंकुश शासन को बढ़ावा देने में नई दिल्ली ने सक्रिय भूमिका निभाई और उसके बदले में कई तरह की राजनीतिक और आर्थिक रियायत प्राप्त की। श्रीलंका के बारे में वे कहते हैं, "आईपीकेएफ के समय से पहले और उसके बाद से श्रीलंका को अपनी राजनीति में नई दिल्ली के अतिक्रमण से बार-बार जूझना पड़ा है। इसके अलावा नई दिल्ली के अधिकारी सक्रिय रूप से भारतीय व्यापार समूहों को द्वीप पर व्यापार के लिए प्रेरित कर रहे हैं।" नेपाल, बांग्लादेश और श्रीलंका के बुद्धिजीवियों का ऐसा विचार है कि भारत ने हमेशा से एक दबंग बड़े भाई का किरदार निभाया है। 19वीं सदी में मेक्सिको के राष्ट्रपति ने कहा था, "मेक्सिको ईश्वर से जितना दूर है, अमेरिका के उतना ही करीब है।"

ऐसा नहीं है कि भारत के इरादे अभी ऐसे हो गए हैं। यह पहले से ही रहे हैं, जब राजीव गांधी ने भारतीय शांति सेना को श्रीलंका में भेजा था। उन्होंने नरेंद्र मोदी से पहले नेपाल पर नाकाबंदी लगा दी थी। सही मायनों में वह हमारे पहले प्रधानमंत्री ही रहे होंगे, जो विदेश मंत्री भी थे। उन्होंने ही इस संबंध में दिशा तय की होगी। जवाहरलाल नेहरू के साथ काम कर चुके राजनयिक जगत मेहता ने एक बार कहा था, "नेहरू इस बात को पूरी तरह से समझ नहीं पाए या विदेश मंत्रालय ने उन्हें सही सलाह नहीं दी कि 20वीं सदी में अपने असमान पड़ोसियों के साथ कूटनीति स्थापित करना कितना मुश्किल हो सकता है?" कम्युनिस्ट चीन ने मैकमोहन रेखा को कभी नहीं माना। उसका कहना है कि उससे हस्ताक्षर दबाव में कराए गए थे। उस समय वह पश्चिमी साम्राज्य के अधीन था। 1962 में चीन के आक्रमण ने भारतीयों के मन पर एक गहरा घाव दिया है। उसी तरह पाकिस्तान ने न सिर्फ जम्मू-कश्मीर, बल्कि देश के कई हिस्सों में आतंकवाद को बढ़ावा दिया है। ऐसे में उसके साथ मेल-मिलाप से मुश्किलें बढ़ती हैं। हालांकि छोटे पड़ोसी देशों के साथ इस तरह की समस्या नहीं है। इसके विपरीत कई ऐसे कारक हैं, जो देशों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंधों को बढ़ावा देने का काम कर रहे हैं। मसलन, भारत और नेपाल के बीच खुली सीमा है और कई सांस्कृतिक समानताएं हैं। भारत ने बांग्लादेश को पाकिस्तान से आजाद होने में मदद की। भारत और श्रीलंका का औपनिवेशिक इतिहास एक ही रहा है। ऐसे में अगर भारत और इन तीनों देशों के बीच संबंध कभी भी सहज नहीं रहे हैं तो यह बड़े और शक्तिशाली राष्ट्र की ओर से आत्मनिरीक्षण की मांग करता है।

साल 2007-08 में जब हमारी अर्थव्यवस्था बहुत अच्छी थी, तब भारत के 'सुपर पावर' बनने की बातें बहुत की जाती थीं। इस तरह के दावे समय से पहले थे। दुनिया पर वर्चस्व बनाने वाली सोच की जगह अपनी सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों में सुधार करना अधिक बुद्धिमानी थी। मनमोहन सिंह के दूसरे कार्यकाल में भारत को वैश्विक स्तर पर महान बनाने की बात कम हो गई। हालांकि नरेंद्र मोदी के पहले कार्यकाल में यह बात फिर से उभरी और स्वदेशी के लेबल के तहत उसकी ब्रांडिंग की गई।

हमारा देश जिस तरह की चुनौतियों का सामना कर रहा है, उनमें संस्थाओं का नष्ट होना, बढ़ती असमानता, भ्रष्टाचार तथा भाई-भतीजावाद के अलावा पर्यावरणीय गिरावट शामिल हैं। ऐसे में भारत के विश्व गुरु बनने की बात का कोई मतलब नहीं है। हां, विश्व मित्र बनने वाली बात में दम लगता है। अगर भारत दुनिया के सभी देशों का दोस्त बनकर रहना चाहता है तो उसे अपने पड़ोसियों के साथ व्यवहार में बदलाव लाना होगा, खासतौर पर बांग्लादेश, नेपाल और श्रीलंका के साथ। इन देशों के साथ अच्छे संबंध बनाने के लिए हमें न सिर्फ उनके नेताओं, बल्कि नागरिकों के प्रति भी आदर और विश्वास का भाव दिखाना होगा।

...तो आगरा में जन्म लेते श्रीकृष्ण

कल श्रीकृष्ण जन्माष्टमी है। कृष्ण मथुरा में जन्मे, लेकिन यहां यह बताना मौजूं होगा कि उनका गृह जनपद आगरा था। यदि वसुदेव और देवकी मथुरा में कारावास में न होते तो श्रीकृष्ण का जन्म स्थान आगरा होता। उनके पिता वसुदेव और पितामह शूरसेन बटेश्वर निवासी थे।

श्रीकृष्ण माता देवकी और पिता वसुदेव की आठवीं संतान थे।

विनोद पुरोहित

खुला आकाश

श्रीकृष्ण का गृह जनपद आगरा था। यदि वसुदेव और देवकी मथुरा में कारावास में न होते तो श्रीकृष्ण का जन्म स्थान आगरा होता। उनके पिता वसुदेव और पितामह शूरसेन बटेश्वर निवासी थे।

उनके पूर्वज यदु की संतान होने के कारण यदुवंशी कहे जाते हैं। इतिहास खंगालने पर ज्ञात होता है कि सन 625 में भारत आए एक चीनी यात्री ने अपने भारत वर्णन में कंस के राज्य का विस्तार 833 मील बताया है। कंस का आगरा में किला था। इस तथ्य की पुष्टि आगरा के गांव गोकुलपुरा स्थित कंस दरवाजा से भी होती है। विशन कपूर ने अपनी 'आगरा दर्शन' नामक पुस्तक में लिखा है कि महाभारत काल में आगरा में कंस का जेलखाना था। आज भी कंस दरवाजे से जुड़ी एक दीवार है। होली पड़वा के दिन मनसा देवी मंदिर से निकलने वाली कृष्ण-राधा यात्रा कंस दरवाजे पर जाकर समाप्त होती है। इन सभी तथ्यों का उल्लेख राजकिशोर राजे की पुस्तक 'तवारीख-ए-आगरा' में मिलता है।

श्रीभागवत सुधा सागर के वर्णन अनुसार, द्वापर युग में वहां अंधक वंशीय राजा आहुक राज्य करते थे। राजा आहुक के दो पुत्र देवक और उग्रसेन थे। आहुक की मृत्यु के बाद उग्रसेन ने राजसिंहासन संभाला। उग्रसेन के घर कंस सहित नौ पुत्र और चार कन्याओं का जन्म हुआ। देवक के देवयान सहित चार पुत्र और सात कन्याएं हुईं। इस तरह देवकी, कंस की सगी बहन नहीं थीं। देवक ने अपनी बड़ी बेटी देवकी और उनकी छह बहनों का विवाह शौरीपुर के राजा शूरसेन के पुत्र वसुदेव से किया था। यही शौरीपुर वर्तमान में बटेश्वर है। बाद के वर्षों में अंधक वंश में कुछ ऐसे हालात बने कि कंस ने पिता उग्रसेन को बंदी बनाकर राजसिंहासन पर कब्जा कर लिया। उसी दौर का वाकया है- वसुदेव मथुरा से नवविवाहिता पत्नी देवकी को विदा कराकर शौरीपुर (बटेश्वर) प्रस्थान कर रहे थे। कंस खुद रथ को हांक रहा था। तभी आकाशवाणी हुई कि "अरे मूर्ख, तू जिसे रथ में बैठाकर ले जा रहा है, उसकी आठवीं संतान तुझे मार डालेगी।" भविष्यवाणी सुनकर कंस भयभीत हो गया। उसने वसुदेव सहित देवकी को बंदी बना लिया और उनकी सात संतानों को कंस ने वध कर दिया। वसुदेव ने आठवीं संतान को प्रयत्न करके गोकुल में नंद के यहां पहुंचा दिया। इसी आठवीं संतान कृष्ण ने कंस का वध करके राजा उग्रसेन को पुनः गद्दी पर बैठाया और कंस के आतंक का अंत किया था।